**ओ३म्**

**‘माता-पिता, आचार्य, चिकित्सक व किसान आदि की तरह धर्म प्रचारक**

**का असत्य धार्मिक मान्यताओं का खण्डन आवश्यक’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

खण्डन किसी बात को स्वीकार न कर उसका दोष दर्शन कराने व तर्क व युक्तियों सहित मान्य प्रमाणों को उस मान्यता व विचार को खण्डित व अस्वीकार करने को कहते हैं। हम सब जानते हैं कि सत्य एक होता है। अब मूर्तिपूजा को ही लें। क्या मूर्तिपूजा जिस रूप में प्रचलित है, वह ईश्वरपूजा का सत्य स्वरूप है? इस मूर्तिपूजा के पक्ष व विपक्ष के प्रमाणों, तर्कों व युक्तियों को प्रस्तुत कर जो प्रमाण, तर्क व युक्तियां अखण्डनीय होती है, वही सत्य होता है। मूर्तिपूजा करने वाले बन्धुओं को यदि इसे प्रमाणिक, तर्क व युक्ति संगत सिद्ध करने के लिए कहा जाये तो वह ऐसा नहीं कर सकते। दूसरी ओर वेदों के विद्वान व धर्म के मर्मज्ञों से जब इसकी चर्चा करते हैं तो वह मूर्तिपूजा को ईश्वर की पूजा, सत्कार, उसकी उपासना आदि के रूप में स्वीकार नहीं करते। वह बताते हैं कि ईश्वर की पूजा व उसका सत्कार करने की पद्धति मूर्तिपूजा नहीं किन्तु उससे सर्वथा भिन्न योग, ध्यान, स्वाध्याय, चिन्तन, मनन व वेद विहित कर्मों को करना, निषिद्ध कर्मों को न करना आदि है। सृष्टि के आरम्भ से खण्डन-मण्डन की परम्परा चली आयी है। खण्डन प्रत्यक्ष व परोक्ष दोनों रूपों में किया जाता है। प्रत्यक्ष में यह उपदेश, लेखन तथा शास्त्रार्थ की चुनौती आदि के द्वारा होता है। परोक्ष रूप में प्रचलित प्रथाओं को स्वीकार न कर बिना उपदेश व प्रवचन, लेखन व चुनौती दिए नई परम्पराओं को अपनाना या उन्हें प्रवृत्त करना भी एक प्रकार से विद्यमान मिथ्या परम्पराओं, असत्य धार्मिक मान्यताओं आदि का खण्डन ही होता है।

 संसार के प्रत्येक व्यक्ति का अपना एक परिवार होता है जिसमें अनिवार्य रूप से माता पिता होते हैं। माता से सन्तान का जन्म होता है। माता-पिता दोनों मिलकर अपनी सन्तान, पुत्र व पुत्री का पालन करते हैं। उन्हें अच्छे संस्कार देने का प्रयत्न करते हैं। पुत्र द्वारा गलती करने, पढ़ाई न करने, किसी का अनादर करने, क्रेाध, चोरी, चुंगली तथा अस्वास्थ्यप्रद भोजन करने आदि पर ताड़ना करते हैं। यह भी एक प्रकार का खण्डन ही है। जब हम विद्यार्थी थे और हमारा परीक्षा का परिणाम आता था तो माता-पिता उसे देखकर प्रसन्न होने के बजाय जिन विषयों में सबसे कम नम्बर होते थे, उसका उल्लेख कर निराशा व्यक्त करने के साथ कुछ शिक्षा देते थे। यह भी एक प्रकार से खण्डन व मण्डन ही होता था जिससे हम स्वयं का सुधार करते थे। जो बच्चे कुसंगति करते हैं, माता पिता येन केन प्रकारेण अपने बच्चें को कुसंगति से निकालने में तत्पर रहते हैं। क्या यह उस बच्चे के अनुचित व्यवहार का खण्डन नहीं है? यदि वह सराहना करते तो वह मण्डन कहलाता। सराहना न होने के स्थान पर आलोचना व डांट पड़ रही है, अतः यह भी खण्डन का एक प्रकार है और बालक के जीवन निर्माण के लिए आवश्यक व अनिवार्य है।

 आचार्य की ब्रह्मचारी व शिष्य के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वस्तुतः आचार्य वह होता है जो अपने ब्रह्मचारी, शिष्य वा विद्यार्थी को सद् आचरण की शिक्षा देकर द्विज बनाता है। द्विज का अर्थ बुद्धिमान, ज्ञानवान, विद्यावान तथा संस्कारित होना है। ज्ञान के क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण ईश्वर प्रदत्त ज्ञान है जिसे वेद के नाम से सारा संसार जानता है। आचार्य अपने ब्रह्मचारी को वेदों का ज्ञान कराता है। इसके साथ सभी प्रकार से उसे आध्यात्मिक ज्ञान के साथ सांसारिक ज्ञान की शिक्षा भी देता है। अपने इस कर्तव्य को सुचारू रूप से पूरा करने के लिए उसे विद्यार्थी के जीवन में से बुरे संस्कारों को चुन-चुन कर दूर करना होता है। जीवन में जितने अच्छे गुण होते हैं, उतने ही उसके विपरीत, बुरे गुण व दोष भी होते हैं। आचार्य को दोषों का खण्डन तर्क व युक्ति व शास्त्र प्रमाणों के आधार पर अपने विद्यार्थी पर करना होता है और इसके साथ उसे शास्त्रों की शिक्षा व महापुरूषों के जीवनों का ज्ञान कराकर ज्ञान, चरित्र व पुरूषार्थ का महत्व प्रतिपादन करना उसका दैनन्दिन कार्य होता है। अच्छे शिष्य व अच्छे गुरू के मिलन से ब्रह्मचारी श्रेष्ठ गुणों को धारण कर यशस्वी बनता है। इस प्रकार अवगुणों की आलोचना, निन्दा, भत्र्सना करना गुरू वा आचार्य का एक प्रकार से खण्डन करना ही है जिससे श्रेष्ठ विद्यार्थी बनता है।

 आईये, चिकित्सक के बारे में भी कुछ विचार कर लेते हैं। चिकित्सक के पास रोगी व्यक्ति स्वयं ही जाता है और चिकित्सक से रोग को दूर करने की प्रार्थना करता है। विद्वान चिकित्सक रोग के कारण का पता लगाता है और रोगी को कुपथ्य को छोड़ने व पथ्य को अपनाने का परामर्श देता है। इसके साथ उस रोग के शमन की ओषधि भी वह रोगी को देता है जिससे कुछ ही समय बाद रोगी ठीक हो जाता है। रोग की साधारण स्थिति में पथ्य व ओषधि के सेवन से स्वस्थ हुआ जाता है। रोग यदि कुछ पुराना है व उसकी तीव्रता अधिक हो तो ओषधियों को इंजेक्शन के रूप में दिया जाता है। कई बार शरीर के अन्दर कुछ विकृतियां हो जाती हैं। परीक्षा कर चिकित्सक ऐसे रोगों की शल्य क्रिया करता है जिससे रोगी रोगमुक्त होकर स्वस्थ हो जाता है। यहां चिकित्सक द्वारा रोग के कारणों को जानकर जिन पदार्थों के सेवन से रोगी को मना किया जाता है, वह एक प्रकार से खण्डन ही है। इसी प्रकार से रोगी व्यक्ति को अपनी पुरानी जीवन शैली में कुछ परिवर्तन भी करना होता है। जिन चीजों को छोड़ने की सलाह चिकित्सक देता है वह भी उनका खण्डन करना ही है। ऐसा किये बिना व्यक्ति स्वस्थ नहीं हो सकता। शल्य क्रिया में तो कई बार विकृत अंग व विकृति को काटकर शरीर से पृथक कर दिया जाता। इस खण्डन से ही मनुष्य स्वस्थ होकर अपने जीवन को सुख व आनन्द के साथ व्यतीत करने में समर्थ होता है। यह खण्डन रोगी के हित में आवश्यक होता है और कोई इसे बुरा नहीं कहता। सभी इसका समर्थन करते हैं।

 किसान का मुख्य कार्य अपने खेतों को जोतना, उसमें खाद डालना, भूमि को जल से सिंचित करना, बीज बोना व उसके बाद फसल की निराई व गुडाई करना होता है जिससे अधिक से अधिक उपज प्राप्त की जा सके। कठोर भूमि को जोतकर उसे कोमल बनाया जाता है। यह कठोरता का खण्डन करना है जिससे भूमि कोमल होती है। जल से सिचिंत करना भी भूमि की कठोरता को कम करने के लिए होता है अन्यथा बीज उगेगा नहीं और फसल का इच्छित उत्पादन नहीं हो पाने से किसान को क्लेश होगा। यह कठोर भूमि को कोमल करना अर्थात् भूमि को संस्कारित करना कठोरता के गुण का खण्डन ही है। इसी प्रकार से निराई व गुडाई कर खरपतवार को दूर करना भी उनका खण्डन ही होता है। बिना खण्डन के आशा के अनुरूप परिणाम प्राप्त नहीं होते हैं। यदि किसान भूमि को कोमल करने के लिए हल नहीं चलायेगा, सिंचित नहीं करेगा और निराई व गुडाई नहीं करेगा, जो कि खण्डन हैं, तो वह बाद में पछतायेगा व दुःखी होगा। इस प्रकार खण्डन के परिणाम से ही आशा के अनुरूप खाद्यान्न का उत्पादन होता है।

 अब धर्म प्रचारक के कार्य पर विचार करते हैं। धर्म प्रचारक का कार्य मनुष्य के धर्म वा कर्तव्यों का प्रचार करना है जिसको करके वह न केवल सुखी जीवन ही व्यतीत करे अपितु जीवन के उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को भी प्राप्त करने में अग्रसर हो। इसके लिए पाप कर्मों को छोड़ना और अधिक से अधिक पुण्य कर्मों को करना होता है। विद्याध्ययन करने के पश्चात ब्रह्मचर्य युक्त पुरुषार्थी जीवन व्यतीत करते हुए यथासमय पंचमहायज्ञों को करना ही धर्मपूर्वक सुख प्राप्ति अर्थात् अभ्युदय एवं निःश्रेयस की प्राप्ति का मार्ग है। आजकल लोगों ने परजन्म वा निःश्रेयस अर्थात् मोक्ष के बारे में सोचना ही छोड़ दिया है। कर्मों का बन्धन एक प्रकार की जेल होती है और इसके विपरीत मुक्ति, मोक्ष या निःश्रेयस होता है। दार्शनिक दृष्टि से यह निष्कर्ष प्राप्त होता हैै कि बन्धन में पड़ा व्यक्ति कभी न कभी स्वतन्त्र था और जो स्वतन्त्र अर्थात् मोक्ष में हैं वह बन्धन से ही मोक्ष में गये हैं और अवधि पूरी कर वापिस पुनः बन्धन में लौटेंगे। जिस प्रकार एक सरकारी कर्मचारी अवकाश की अवधि पूरा करने पर पुनः अपने कार्य पर लौट कर आता है, उसी प्रकार से बन्धन से मुक्त होकर जीवात्मा मुक्ति को और मुक्ति की अवधि पूरी होने पर पुनः बन्धन अर्थात् मनुष्य का जन्म धारण करता है। आर्यजगत के प्रसिद्ध विद्वान महात्मा आर्यभिक्षु जी अपने प्रवचन में सुनाते थे कि एक गोपालक ने सेवक को गाय को खोलने का आदेश दिया। वहां एक दार्शनिक खड़ा था, उसने अपनी डायरी में लिखा कि गाय बन्धी होगी। एक अन्य घटना में गोपालन सेवक को गाय को बांधने को कहता है। दार्शनिक यह सुनकर अपनी डायरी में नोट करता है कि गाय खुली रही होगी। इससे बन्धन व मोक्ष का अनुमान होता है। धर्म प्रचारक का मुख्य कार्य मनुष्यों को धर्म अर्थात् सद्कर्मों का ज्ञान कराना और असद् कर्मो से छुड़ाना है जिससे उनका जीवन अभ्युदय व निःश्रेयस को प्राप्त कर सके। इसके लिए मनुष्यों को अशुभ कर्मों को छोड़ना और शुभ कर्मों को धारण करना होगा। शुभ कर्म वेद विहित कर्मों को कहते हैं। वेद निषिद्ध वा वेद विरोधी कर्म अशुभ या पाप कर्म कहलाते हैं। इन अशुभ व पाप कर्मों को छुड़ाने के लिए सच्चे धर्म प्रचारकों के पास इनका दोष दर्शन अर्थात् खण्डन करने के अतिरिक्त दूसरा कोई उपाय नहीं है। यह अलोचना व खण्डन धर्म प्रचारक के अपने हित के लिए नहीं अपितु उस निषिद्ध व विरुद्ध मान्यता के मानने वाले व्यक्ति के हित व कल्याण के लिए किया जाता है। यदि ऐसा नहीं होगा तो मनुष्य यथार्थ सुख, ईश्वरीय आनन्द व मोक्ष आदि से सदा सदा के लिए दूर हो जायेगा। महर्षि दयानन्द के खण्डन का उद्देश्य भी लोगों को असत्य से हटाकर सत्य में स्थित व स्थिर करना था। वह अपने उद्देश्य में आंशिक रूप से सफल भी हुए। यदि वह खण्डन न करते तो आज हम भी किसी एक मत के अनुयायी बन कर अज्ञान, असत्य, अन्धविश्वास, कुरीति व असभ्याचरण से ग्रस्त होते। उन्होंने हमें अज्ञान के कूप से निकाल कर ज्ञान के आकाश में स्थित किया। इस प्रकार असत्य व अज्ञान से युक्त धार्मिक मान्यताओं का धर्म प्रचारकों द्वारा खण्डन करना सर्वथा उचित है। हां, यदि कोई अपने मत के विस्तार व लाभ के लिए अज्ञान का प्रचार प्रसार करता है तो वह अनुचित व हेय है। विद्वानों को प्रीतिपूर्वक उनका युक्ति व प्रमाणों से खण्डन कर असत्य को छुंड़वाना व सत्य को मनवाना चाहिये। **यदि असत्य अवैदिक मतों का खण्डन न किया गया तो मतों की संख्या में वृद्धि होकर यह अनन्त की ओर अग्रसर होगी जिससे मनुष्य भ्रान्त होकर किंकर्तव्यविमूढ़ हो जायेंगे और धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष से वंचित हो जायेंगे। अतः सत्य की स्थापना व सब मनुष्यों को सुख व मोक्ष लाभ के लिए असत्य का खण्डन आवश्यक एवं अपरिहार्य है।** इसी के साथ इस लेख को विराम देते हैं।

 **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**